



नासिरा शर्मा के साहित्य में गंगा-जमुनी तहज़ीब और सामाजिक सहअस्तित्व

गीतेश्वरी ताम्रकार¹, डॉ. मो. अज़हर खान²

¹शोधार्थी, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

²शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापक (हिंदी विभाग), भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में नासिरा शर्मा के साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज में विद्यमान गंगा-जमुनी तहज़ीब तथा सामाजिक सहअस्तित्व की सशक्त परंपरा का विश्लेषण किया गया है। उनके कथा-संसार में विविध धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषिक समुदायों के मध्य संवाद, सहिष्णुता और मानवीय संवेदना का अद्भुत समन्वय दृष्टिगोचर होता है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि नासिरा शर्मा ने अपने पात्रों और कथानकों के माध्यम से सांप्रदायिक विभाजनों के विरुद्ध मानवीय एकता, पारस्परिक सम्मान और सह-अस्तित्व की चेतना को सुदृढ़ किया है, जिससे उनका साहित्य समकालीन समय में सामाजिक समरसता का एक महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है।

प्रमुख शब्दावली (Keywords) – गंगा-जमुनी तहज़ीब, सामाजिक सहअस्तित्व, नासिरा शर्मा, सांस्कृतिक समन्वय, हिन्दू-मुस्लिम एकता, मानवीय संवेदना, साम्प्रदायिक सौहार्द, भारतीय संस्कृति, बहुसांस्कृतिक समाज, सामाजिक समरसता

प्रस्तावना

नासिरा शर्मा समकालीन हिन्दी साहित्य की उन महत्वपूर्ण रचनाकारों में अग्रगण्य हैं, जिन्होंने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज की जटिल सांस्कृतिक संरचना, मानवीय संबंधों की गहन संवेदनशीलता तथा बहुलतावादी जीवन-दृष्टि को अत्यंत प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त किया है। उनका साहित्य केवल कथा-विन्यास तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह भारतीय समाज की गहराई में प्रविष्ट होकर उसकी आत्मा में रची-बसी सहअस्तित्व की परंपरा को उजागर करता है। विशेषतः गंगा-जमुनी तहज़ीब; जो भारतीय सांस्कृतिक जीवन का एक अद्वितीय और जीवंत प्रतीक है, उनके लेखन में अत्यंत सशक्त रूप में प्रतिफलित होती है।

गंगा-जमुनी तहज़ीब का आशय उस सांस्कृतिक समन्वय से है, जिसमें विभिन्न धर्मों, भाषाओं, रीति-रिवाजों और जीवन-शैलियों का सहज सहअस्तित्व दिखाई देता है। यह केवल एक सांस्कृतिक अवधारणा नहीं, बल्कि भारतीय समाज की ऐतिहासिक चेतना का अभिन्न अंग है, जिसमें विविधता के बीच एकता का भाव निहित है। नासिरा शर्मा ने अपने साहित्य में इसी बहुलतावादी संस्कृति को न केवल चित्रित किया है, बल्कि उसे एक मानवीय मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित भी किया है। उनके कथा-संसार में हिन्दू और मुस्लिम समुदायों के बीच संबंध केवल सह-अस्तित्व तक सीमित नहीं रहते, बल्कि वे आत्मीयता, साझेदारी और पारस्परिक सम्मान के आधार पर विकसित होते हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य नासिरा शर्मा के साहित्य में गंगा-जमुनी तहज़ीब और सामाजिक सहअस्तित्व के विविध आयामों का विश्लेषण करना है। यह अध्ययन इस तथ्य को रेखांकित करता है कि नासिरा शर्मा ने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से उस भारतीय सांस्कृतिक विरासत को पुनर्स्थापित करने का प्रयास



किया है, जो समय-समय पर सांप्रदायिक तनावों और संकीर्ण मानसिकताओं के कारण चुनौती का सामना करती रही है। उनके पात्र और कथानक इस बात के साक्ष्य हैं कि मानवता, प्रेम और सहिष्णुता किसी भी धर्म या समुदाय की सीमाओं में बंधे नहीं होते, बल्कि वे सार्वभौमिक मूल्य हैं, जो समस्त मानव समाज को जोड़ने की क्षमता रखते हैं।

नासिरा शर्मा के साहित्य में सामाजिक सहअस्तित्व की अवधारणा केवल सैद्धांतिक स्तर पर नहीं, बल्कि जीवन के विविध प्रसंगों में व्यावहारिक रूप में अभिव्यक्त होती है। उनके पात्र विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों से आते हुए भी एक-दूसरे के जीवन में सहभागी बनते हैं। वे एक-दूसरे के त्योहारों, परंपराओं और संस्कारों में भाग लेते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज की वास्तविक शक्ति उसकी विविधता में निहित है। यह विविधता किसी विभाजन का कारण नहीं, बल्कि एकता का आधार है। विशेष रूप से उनके उपन्यासों में यह देखा जा सकता है कि मोहरम, दीवाली, होली, ईद जैसे त्योहार केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं रह जाते, बल्कि वे सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक साझेदारी के प्रतीक बन जाते हैं। इन अवसरों पर विभिन्न समुदायों के लोग एक-दूसरे के साथ मिलकर उत्सव मनाते हैं, जिससे पारस्परिक विश्वास और आत्मीयता का वातावरण निर्मित होता है। इस प्रकार नासिरा शर्मा का साहित्य यह संदेश देता है कि सांस्कृतिक विविधता को स्वीकार करना और उसका सम्मान करना ही सामाजिक सहअस्तित्व की आधारशिला है।

नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उन्होंने गंगा-जमुनी तहज़ीब को केवल अतीत की स्मृति के रूप में नहीं, बल्कि वर्तमान की आवश्यकता के रूप में प्रस्तुत किया है। आज के वैश्विक और बहुसांस्कृतिक समाज में, जहाँ पहचान की राजनीति और सांप्रदायिक तनावों का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, वहाँ उनका साहित्य सहिष्णुता, संवाद और सह-अस्तित्व की नई संभावनाएँ प्रस्तुत करता है। उनके लेखन में यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित होता है कि यदि समाज को स्थायी शांति और समरसता की दिशा में अग्रसर होना है, तो उसे अपने भीतर निहित इस सांस्कृतिक समन्वय की परंपरा को पुनः आत्मसात करना होगा।

उनकी भाषा और शिल्प भी इस सांस्कृतिक समन्वय के महत्वपूर्ण माध्यम बनते हैं। हिन्दी, उर्दू, देशज और अंग्रेजी शब्दों का मिश्रण उनके साहित्य में एक ऐसी भाषिक संरचना का निर्माण करता है, जो स्वयं गंगा-जमुनी तहज़ीब का जीवंत उदाहरण है। यह भाषिक बहुलता न केवल उनके पात्रों की वास्तविकता को प्रामाणिक बनाती है, बल्कि पाठकों को भी उस सांस्कृतिक वातावरण का अनुभव कराती है, जिसमें विविधता और एकता का अद्भुत संगम विद्यमान है।

प्रस्तुत शोध पत्र में यह भी प्रतिपादित किया गया है कि नासिरा शर्मा का साहित्य केवल सांस्कृतिक समन्वय का उत्सव नहीं मनाता, बल्कि उन चुनौतियों और विडंबनाओं को भी उजागर करता है, जो इस सहअस्तित्व को प्रभावित करती हैं। वे यह स्वीकार करती हैं कि समाज में संकीर्णता, पूर्वाग्रह और राजनीतिक हस्तक्षेप जैसी शक्तियाँ इस एकता को कमजोर करने का प्रयास करती हैं, किन्तु इसके बावजूद मानवीय संबंधों की मूलभूत संवेदनाएँ इन विभाजनों से ऊपर उठने की क्षमता रखती हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा का साहित्य भारतीय समाज की उस आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें सह-अस्तित्व, सहिष्णुता और मानवीय एकता के मूल्य गहराई से अंतर्निहित हैं। उनका कथा-संसार हमें यह सिखाता है कि धर्म, भाषा और संस्कृति की भिन्नताओं के बावजूद मनुष्य एक साझा



मानवीय धरातल पर जुड़ा हुआ है। यही गंगा-जमुनी तहज़ीब का वास्तविक स्वरूप है और यही सामाजिक सहअस्तित्व की आधारशिला भी।

इस प्रकार प्रस्तुत प्रस्तावना यह स्पष्ट करती है कि नासिरा शर्मा का साहित्य न केवल एक रचनात्मक उपलब्धि है, बल्कि वह एक वैचारिक हस्तक्षेप भी है, जो समाज को विभाजन से एकता की ओर, संकीर्णता से व्यापकता की ओर और असहिष्णुता से सह-अस्तित्व की ओर ले जाने का मार्ग प्रशस्त करता है। यही उनकी रचनात्मकता की सबसे बड़ी शक्ति और समकालीन प्रासंगिकता है।

पूर्ववर्ती शोधों का अवलोकन

लोधी पी. (2025) के शोध में नासिरा शर्मा के उपन्यासों के माध्यम से स्त्री अस्मिता और सामाजिक संघर्ष का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि उनकी स्त्रियाँ सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती देकर परिवर्तन की सक्रिय वाहक बनती हैं और आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर होती हैं।

शर्मा आर. (2022) के अध्ययन में 'शाल्मली' उपन्यास के माध्यम से स्त्री-अस्मिता के प्रश्न को केंद्र में रखा गया है। शोध का निष्कर्ष यह है कि आधुनिक स्त्री अपनी पहचान और अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए पारंपरिक पितृसत्तात्मक ढाँचे को चुनौती देती है।

कुमार एस. (2021) नासिरा शर्मा की कहानियों में स्त्री-विमर्श का अध्ययन के माध्यम से बताते हैं कि उनके लेखन में स्त्री के सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक संघर्षों का व्यापक चित्रण है, जो उसे एक स्वतंत्र सत्ता के रूप में स्थापित करता है।

मिश्रा एन. (2019) ने नासिरा शर्मा के साहित्य में सांस्कृतिक समन्वय और गंगा-जमुनी तहज़ीब का अध्ययन किया। अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि उनके साहित्य में हिन्दू-मुस्लिम एकता केवल विचार नहीं, बल्कि जीवन-व्यवहार के स्तर पर प्रकट होती है।

वर्मा ऐ. (2018) ने नासिरा शर्मा के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ और स्त्री की स्थिति का अध्ययन किया। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि उनका साहित्य समाज की विसंगतियों को उजागर करते हुए स्त्री को परिवर्तन का माध्यम बनाता है।

तिवारी डी. (2017) ने नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में धार्मिक सहअस्तित्व की अवधारणा पर अध्ययन किया। निष्कर्षतः यह स्पष्ट होता है कि उनका साहित्य सांप्रदायिक सौहार्द का एक जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करता है।

सिंह एस. (2016) ने अपने शोध में नासिरा शर्मा की रचनाओं में स्त्री चेतना और सामाजिक बदलाव का अध्ययन किया। शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि उनकी स्त्रियाँ सामाजिक संरचना में बदलाव लाने की क्षमता रखती हैं।

गुप्ता आर. (2015) ने नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में पारिवारिक संबंधों के विघटन का अध्ययन किया और पाया कि आधुनिक भौतिकवाद ने संबंधों की आत्मीयता को प्रभावित किया है, जिसका सर्वाधिक प्रभाव स्त्री जीवन पर पड़ता है।

कुमार वी. (2013) ने नासिरा शर्मा के उपन्यासों में सामाजिक संघर्ष और वर्गीय चेतना का अध्ययन किया, जिसके निष्कर्ष दर्शाते हैं कि उनका साहित्य समाज के हाशिये पर स्थित वर्गों की आवाज़ को प्रमुखता देता है।

चौधरी ऐ. (2012) ने अपने शोध में नासिरा शर्मा के साहित्य में स्त्री की मनोवैज्ञानिक स्थिति का अध्ययन



किया, जिसके निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि उनके पात्र आंतरिक द्वंद्व और सामाजिक दबावों के बीच अपनी पहचान खोजते हैं।

सिन्हा ऐ. (2010) अपने शोध में नासिरा शर्मा के कथा-साहित्य में स्त्री-विमर्श की बहुआयामी उपस्थिति का विश्लेषण करते हुए यह निष्कर्ष प्राप्त करते हैं कि उनके साहित्य में स्त्री केवल पीड़ित नहीं, बल्कि आत्मनिर्णय की क्षमता से युक्त एक सशक्त चेतना के रूप में उभरती है। यह अध्ययन स्त्री-अस्मिता को सामाजिक संरचना के संदर्भ में समझने का महत्वपूर्ण प्रयास है।

उपरोक्त शोधों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि नासिरा शर्मा के साहित्य पर केंद्रित अध्ययन मुख्यतः स्त्री-विमर्श, सामाजिक यथार्थ, सांस्कृतिक समन्वय और मानवीय सहअस्तित्व जैसे विषयों पर केंद्रित रहे हैं। इन सभी शोधों का सामूहिक निष्कर्ष यह है कि नासिरा शर्मा का साहित्य समकालीन हिन्दी साहित्य में स्त्री-अस्मिता, गंगा-जमुनी तहज़ीब और सामाजिक समरसता के सशक्त प्रतिनिधि के रूप में स्थापित होता है।

गंगा-जमुनी तहज़ीब और सामाजिक सहअस्तित्व के परिप्रेक्ष्य में नासिरा शर्मा का साहित्य

भारतीय संस्कृति का मूल स्वर सदैव समन्वय, सहिष्णुता और उदारता रहा है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह अपने भीतर आने वाले प्रत्येक तत्व को सम्मानपूर्वक स्वीकार करने की क्षमता रखती है। इतिहास साक्षी है कि भारत भूमि पर विभिन्न कालों में अनेक विदेशी जातियाँ; अरब, तुर्क, फारसी, यूनानी, यूरोपीय आदि, विभिन्न उद्देश्यों से आईं; किन्तु यहाँ आकर वे केवल बाहरी तत्व नहीं रहीं, बल्कि इस भूमि की जीवन-धारा में इस प्रकार घुल-मिल गईं कि उनकी अलग पहचान धीरे-धीरे धूमिल हो गई। आज यह निश्चित करना कठिन है कि कौन मूल निवासी है और कौन बाहर से आया हुआ है, क्योंकि भारतीयता ने सबको अपने भीतर समाहित कर लिया है। इसी सांस्कृतिक समृद्धि और व्यापकता की ओर संकेत करते हुए महात्मा गांधी ने कहा है - "मेरा दृढ़ मत है कि जो बहुमूल्य रत्न हमारी संस्कृति के पास है, वह किसी अन्य संस्कृति के पास नहीं है।" यह कथन भारतीय संस्कृति की सार्वभौमिकता और समावेशी चरित्र का प्रमाण प्रस्तुत करता है।

वास्तव में जो विदेशी संस्कृतियाँ अपने मूल भू-भागों; अरब, मिश्र, तुर्की, यूरोप आदि, में अपने विशिष्ट रूप में विद्यमान थीं, वे भारत में आकर यहाँ की भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रभावित होकर रूपांतरित हो गईं। यह रूपांतरण इतना स्वाभाविक और गहन था कि वे जल में नमक की भाँति भारतीय जीवन में विलीन हो गईं। परिणामस्वरूप भारतीय संस्कृति को किसी एक धर्म, जाति या समुदाय की संकीर्ण परिधि में सीमित नहीं किया जा सकता। यह एक बहुरंगी, बहुसांस्कृतिक और बहुधर्मी सभ्यता का अद्वितीय संगम है, जिसे किसी एक पहचान से परिभाषित करना संभव नहीं। इसी संदर्भ में यह कहना समीचीन होगा कि भारतीय संस्कृति न तो पूर्णतः हिंदू है, न इस्लामी, न ही किसी एक परंपरा की प्रतिनिधि, वह इन सभी का समन्वित और सृजनात्मक रूप है।

संस्कृति का वास्तविक उद्देश्य मनुष्य को विभाजित करना नहीं, बल्कि उसे व्यापक दृष्टि से युक्त करना है। कोई भी संस्कृति हमें यह नहीं सिखाती कि हम अपने समाज को श्रेष्ठ और अन्य समाजों को हीन समझें; अपितु वह हमें यह प्रेरणा देती है कि हम विविधताओं का सम्मान करें, उन्हें आत्मसात करें और उनसे सीखकर अपने जीवन को समृद्ध बनाएं। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना अंतर्निहित है। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपनी प्रसिद्ध कृति संस्कृति के चार अध्याय में भारतीय



सांझा संस्कृति के बीज मध्यकालीन सल्तनत काल में विकसित होते हुए देखे हैं, जहाँ अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल में अमीर खुसरो जैसे रचनाकारों ने इस सांस्कृतिक समन्वय को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया। भारतीय संस्कृति के अनेक रूपों में गंगा-जमुनी तहज़ीब का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह वह सांस्कृतिक प्रवाह है जिसमें हिन्दू और मुस्लिम परंपराएँ एक-दूसरे में इस प्रकार गुंथी हुई हैं कि वे एक साझा जीवन-दृष्टि का निर्माण करती हैं। इस समन्वित संस्कृति को साहित्यिक रूप में सशक्त अभिव्यक्ति देने का कार्य नासिरा शर्मा ने अपने उपन्यास 'पारिजात' में अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से किया है, जिसे वर्ष 2016 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस उपन्यास में हिन्दू और मुस्लिम परिवारों की मिली-जुली जीवन-यात्रा को इस प्रकार चित्रित किया गया है कि वह केवल दो समुदायों की कथा न रहकर मानवीय संवेदनाओं का साझा दस्तावेज बन जाती है। विशेषतः विभिन्न धर्मों की विधवाओं के समान दुःख को प्रस्तुत कर लेखिका यह सिद्ध करती हैं कि पीड़ा का कोई धर्म नहीं होता, वह सार्वभौमिक मानवीय अनुभव है। किन्तु वर्तमान समय में इस सांस्कृतिक एकता और सहअस्तित्व की भावना पर अनेक प्रकार के प्रश्नचिह्न लगाए जा रहे हैं। संकीर्ण मानसिकता और पूर्वाग्रहों के कारण विभिन्न समुदायों के बीच दूरी बढ़ती जा रही है। इसका एक प्रमुख कारण परस्पर अनभिज्ञता भी है, विशेषतः इस्लाम और उसकी सांस्कृतिक परंपराओं के प्रति हिन्दू समाज की अपर्याप्त जानकारी। इस संदर्भ में मानवेंद्र नाथ राय का यह कथन अत्यंत महत्वपूर्ण है कि "संसार की कोई भी सभ्य जाति इस्लाम के इतिहास से उतनी अपरिचित नहीं है जितनी हिंदू हैं और संसार की कोई भी जाति इस्लाम को इतनी घृणा से भी नहीं देखती जितनी घृणा से हिंदू देखते हैं।" यह कथन केवल एक पक्ष को नहीं, बल्कि उस व्यापक मानसिकता को उद्घाटित करता है जिसमें अज्ञान और पूर्वाग्रह मिलकर द्वेष को जन्म देते हैं।

इसी प्रकार भारतीय मुसलमानों में भी कभी-कभी भारत की प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर के प्रति दूरी और अनभिज्ञता देखने को मिलती है। यह पारस्परिक दूरी और अविश्वास समाज की एकता और अखंडता के लिए अत्यंत घातक सिद्ध हो सकता है। अतः आवश्यक है कि इस प्रकार की संकीर्णताओं और घृणा की प्रवृत्तियों का तार्किक और मानवीय स्तर पर खंडन किया जाए। भारतीय संस्कृति की वास्तविक शक्ति उसकी विविधता में निहित है, और यदि यह विविधता परस्पर सम्मान और सह-अस्तित्व के भाव से पोषित होती रहे, तभी यह संस्कृति अपने मूल स्वरूप में जीवित रह सकती है।

नासिरा शर्मा के उपन्यास 'पारिजात' में गंगा-जमुनी तहज़ीब और सामाजिक सहअस्तित्व का अत्यंत सजीव, संवेदनशील तथा यथार्थपरक चित्रण प्रस्तुत किया गया है। यह उपन्यास केवल एक कथा नहीं, बल्कि भारतीय सांझा संस्कृति की जीवंत धरोहर का साहित्यिक दस्तावेज है। इसमें तीन मित्रों; प्रहलाद दत्त, बसारत और जुल्फिकार, की घनिष्ठ मित्रता के माध्यम से यह प्रतिपादित किया गया है कि मानवीय संबंध धर्म, जाति और संकीर्णताओं से कहीं ऊपर होते हैं। इनकी मित्रता में किसी प्रकार का धार्मिक विभाजन नहीं, बल्कि आत्मीयता, विश्वास और साझे जीवन का भाव निहित है। वे एक साथ भोजन बनाते हैं, साथ बैठकर खाते हैं और सभी धार्मिक त्योहारों; चाहे मोहर्रम हो या जन्माष्टमी, को समान उत्साह से मनाते हैं। इस प्रकार उनका जीवन स्वयं में सांस्कृतिक समन्वय का प्रतीक बन जाता है।

उपन्यास में मोहर्रम के प्रसंगों के माध्यम से साझा संस्कृति की जो झलक प्रस्तुत की गई है, वह अत्यंत प्रभावशाली है। रोहन दत्त का पात्र, जो हुसैनी ब्राह्मण परंपरा से संबंधित है, मोहर्रम और कर्बला के इतिहास के प्रति जिज्ञासु है। उसकी यह जिज्ञासा केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि पाठक को भी उस सांस्कृतिक विरासत



से जोड़ने का माध्यम बन जाती है। हुसैनी ब्राह्मणों की कथा, जिन्होंने धर्म से ऊपर उठकर मानवता के पक्ष में इमाम हुसैन का साथ दिया, इस तथ्य को रेखांकित करती है कि सच्चा धर्म मानवता है। राहिबसिद्ध दत्त की सात संतानों का कर्बला में बलिदान यह सिद्ध करता है कि यह शहादत किसी एक समुदाय की नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता की साझी विरासत है।

इमाम हुसैन की शहादत को नासिरा शर्मा ने एक सार्वभौमिक मानवीय मूल्य, न्याय और सत्य के लिए संघर्ष, के रूप में प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि कर्बला की घटना पर हिंदू और मुस्लिम दोनों समान रूप से शोक व्यक्त करते हैं। ताजियों का मंदिरनुमा स्वरूप भारतीय परिवेश में सांस्कृतिक समन्वय का सशक्त प्रतीक बनकर उभरता है। मर्सियों का लेखन और उनका गायन भी इस साझा संस्कृति की गवाही देता है, जहाँ हिंदू कवि मर्सिया लिखते हैं और मुस्लिम समुदाय उन्हें गाकर अपनी श्रद्धा प्रकट करता है। दिलावर का यह कथन - "यही है मर्सिया जो मजहब से नहीं, इंसानी जज्बे से ताल्लुक रखता है", इस सांस्कृतिक एकता का सार प्रस्तुत करता है।

उपन्यास में वर्णित 'बुढ़िया का ताजिया' प्रसंग भी सांप्रदायिक सौहार्द का एक अत्यंत मार्मिक उदाहरण है। ताजिए के रास्ते में आने वाली झोपड़ी को हटाने के लिए स्वयं उस वृद्धा का आग्रह यह दर्शाता है कि आस्था और मानवता का संबंध किसी व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर होता है। इस घटना से यह स्पष्ट होता है कि उस समय समाज में धार्मिक भेदभाव की भावना नहीं थी, बल्कि सभी एक साझा सांस्कृतिक चेतना से जुड़े हुए थे। लेखिका द्वारा यह स्मरण - "बीसवीं सदी के शुरू में हिंदू मुसलमानों के ताजिये की शक्ल और बनावट में कोई फर्क नहीं था", उस बीते हुए समय की एकता और समरसता का सशक्त प्रमाण है।

लखनऊ का चित्रण उपन्यास में गंगा-जमुनी तहज़ीब के आदर्श रूप के रूप में सामने आता है। यहाँ त्योहार केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि सामाजिक उत्सव हैं, जिन्हें सभी समुदाय मिलकर मनाते हैं। मोहर्रम के मातम में हिंदुओं की सहभागिता और होली-बसंत के उल्लास में मुसलमानों की भागीदारी इस बात को प्रमाणित करती है कि संस्कृति का वास्तविक स्वरूप साझा अनुभवों में निहित होता है। होली के दृश्य में जब सभी पात्र रंगों में इस प्रकार रंग जाते हैं कि उनकी पहचान मिट जाती है, तब यह प्रतीकात्मक रूप से यह संदेश देता है कि मानवीय संबंधों की वास्तविक पहचान धर्म नहीं, बल्कि प्रेम और आत्मीयता है। इसी प्रकार जन्माष्टमी और दीपावली के प्रसंगों में भी सांस्कृतिक समन्वय की सुंदर झलक मिलती है। प्रभा द्वारा मुस्लिम बच्चों को कृष्ण, राधा और बलराम के रूप में सजाना तथा सुमित्रा और फिरदौस का साथ मिलकर दीप जलाना इस तथ्य को पुष्ट करता है कि भारतीय संस्कृति में प्रतीकों और परंपराओं का आदान-प्रदान स्वाभाविक रूप से होता रहा है। यहाँ तक कि चूड़ी, टीका और मेहंदी जैसे प्रतीक, जो परंपरागत रूप से हिंदू संस्कृति से जुड़े माने जाते हैं, मुस्लिम समाज में भी समान भाव से स्वीकार किए जाते हैं।

शोक और उल्लास दोनों ही स्थितियों में यह साझा संस्कृति स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त होती है। इमाम हुसैन की शहादत पर स्त्रियों द्वारा गाए गए शोकगीत, जिनमें चूड़ियों और सिंदूर का त्याग व्यक्त किया गया है, यह दर्शाते हैं कि दुःख की अभिव्यक्ति भी सांस्कृतिक सीमाओं से परे होती है। इसी प्रकार विवाह में बन्ना-बन्नी के गीतों का प्रचलन भी दोनों समुदायों में समान रूप से मिलता है, जो एक साझा सांस्कृतिक परंपरा की पुष्टि करता है। मोहर्रम के दौरान पायकों का जुलूस, जिसमें विभिन्न वर्गों; हलवाहे, चरवाहे, जुलाहे, मजदूर, के लोग सम्मिलित होते हैं, इस सांस्कृतिक एकता का लोकधर्मी रूप प्रस्तुत करता है। उनका 'या हुसैन' के नारे लगाना यह सिद्ध करता है कि धार्मिक अनुष्ठान भी लोक-संस्कृति में समाहित होकर एक



व्यापक मानवीय अनुभव बन जाते हैं।

नासिरा शर्मा के उपन्यास 'पारिजात' में मोहर्रम का सांस्कृतिक स्वरूप जिस प्रकार भारतीय ग्राम्य जीवन, लोकपरंपराओं और रीति-रिवाजों के साथ गहराई से गुंथा हुआ दिखाई देता है, वह भारतीय सांझा संस्कृति की अद्वितीय विशेषता को उजागर करता है। यह केवल एक धार्मिक पर्व नहीं रह जाता, बल्कि एक व्यापक मानवीय अनुभव में परिवर्तित हो जाता है, जो किसी एक समुदाय की सीमाओं को लांघकर सम्पूर्ण समाज की सांस्कृतिक धरोहर बन जाता है। इस दृष्टि से मोहर्रम का भारतीय स्वरूप उस सांस्कृतिक समन्वय का प्रतीक है, जिसमें विविध धर्मों और समुदायों की आस्थाएँ एक-दूसरे में रच-बस जाती हैं। इस सांस्कृतिक एकता का जीवंत उदाहरण अजमेर शरीफ की ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह है, जहाँ हर धर्म, जाति और वर्ग के लोग समान श्रद्धा से सिर झुकाते हैं। यहाँ यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रद्धा और भक्ति को किसी धार्मिक सीमांकन में बाँधा नहीं जा सकता। इतिहास भी इस तथ्य का साक्ष्य है कि मुगल सम्राट अकबर संतान-प्राप्ति की कामना में फतेहपुर सीकरी तक पैदल यात्रा करते थे, वहीं बनारस के राजा भी अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु इमामबाड़ों तक पैदल जाते थे। यह दर्शाता है कि आस्था का मूल स्वर एक है, वह मानवता से जुड़ा हुआ है, न कि किसी एक धर्म से। उपन्यास में फिरदौस जहाँ का कथन इस सांस्कृतिक दर्शन को अत्यंत प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त करता है; "धर्म की बाट से अलग अक्कीदे और अपनाइयत की है और सब कुछ अपना समझने की है और यही तो हिंदुस्तान है..." यह कथन भारतीय संस्कृति की उस व्यापक दृष्टि को उद्घाटित करता है, जिसमें विविधता को विभाजन का नहीं, बल्कि समृद्धि का आधार माना गया है। कर्बला की घटना हो या महाभारत और रामायण, ये सभी आख्यान भारतीय जनमानस के इतने निकट हैं कि वे किसी एक धर्म तक सीमित न रहकर सम्पूर्ण मानवता के साझा भावबोध का हिस्सा बन जाते हैं। इसी सांस्कृतिक समन्वय का एक और रूप यह है कि जैसे मुसलमानों में मोहर्रम का पर्व मनाया जाता है, वैसे ही हिन्दुओं में दशमी के दिन दशहरा मनाया जाता है। लखनऊ जैसे शहरों में इन दोनों पर्वों में सांस्कृतिक एकता की अद्भुत झलक मिलती है। नवाबों द्वारा प्रारंभ की गई रामलीला में मुस्लिम समुदाय की सक्रिय भागीदारी यह सिद्ध करती है कि सांस्कृतिक परंपराएँ धार्मिक सीमाओं से परे जाकर साझा अनुभव बन जाती हैं। रहमत उल्लाह के दादा का रावण का पात्र निभाना इस तथ्य को और अधिक सजीव बना देता है कि कला और आस्था दोनों ही समुदायों के बीच सेतु का कार्य करती हैं।

यह सांस्कृतिक आदान-प्रदान केवल भारत तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका प्रभाव अन्य देशों में भी देखा जा सकता है। ईरान में कर्बला की घटना को रामलीला की शैली में प्रस्तुत किया जाना इस बात का प्रमाण है कि सांस्कृतिक रूपांतरण और समन्वय एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। इस प्रकार हिन्दू और मुस्लिम दोनों समुदायों द्वारा एक-दूसरे के त्योहारों और परंपराओं में सहभागिता करना भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता और व्यापकता को रेखांकित करता है।

भाषा और साहित्य के क्षेत्र में भी यह गंगा-जमुनी तहज़ीब समान रूप से परिलक्षित होती है। अनेक हिन्दू कवियों ने उर्दू में गज़लें, शायरी और क़व्वालियाँ रचीं, वहीं मुसलमान विद्वानों ने हिन्दू धर्मग्रंथों का अनुवाद करके सांस्कृतिक संवाद को सुदृढ़ किया। मुंशी जगन्नाथ 'अतहर' और मुंशी शंकरदयाल 'फरहत' द्वारा रामायण का उर्दू-फारसी में अनुवाद इस सांस्कृतिक समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण है। फिरदौस जहाँ का यह कथन - "इन दोनों बुजुर्गों ने हिंदू धर्म की कई दूसरी अहम किताबों के भी तुर्जुमे किए हैं..." यह दर्शाता है कि ज्ञान और संस्कृति का आदान-प्रदान ही सभ्यता को समृद्ध बनाता है।



उपन्यास का मुख्य पात्र रोहन इस सांस्कृतिक विरासत को समझने और अपनी जड़ों की खोज करने का प्रयास करता है। उसकी यह यात्रा केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सांस्कृतिक आत्मबोध की यात्रा है। हुसैनी ब्राह्मणों की परंपरा, जो परशुराम से लेकर अश्वत्थामा तक और फिर कर्बला तक जुड़ती है, यह सिद्ध करती है कि भारतीय संस्कृति में धर्म से ऊपर उठकर मानवता और न्याय के लिए संघर्ष की परंपरा रही है। इमाम हुसैन का यह कथन - "हक की तलब से हिंदू व मुस्लिम में क्या फर्क", मानवता के सार्वभौमिक सिद्धांत को स्थापित करता है। उपन्यास में यह भी संकेत किया गया है कि प्राचीन काल में धर्म और राजनीति के बीच स्पष्ट दूरी थी, जिसके कारण समाज में नैतिक मूल्यों और मानवीय संबंधों की प्रधानता थी। भाईचारा, सहयोग और सह-अस्तित्व उस समय के सामाजिक जीवन के मूल तत्व थे। किन्तु आधुनिक समय में इन मूल्यों का ह्रास हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप हिंसा, युद्ध और विभाजन की प्रवृत्तियाँ बढ़ी हैं। प्रकाश नामक पात्र के माध्यम से व्यक्त विश्व-शांति की कामना; "वैसा माहौल हम फिर से जी पाते...", इस तथ्य को रेखांकित करती है कि मानवता आज भी उस समरस और शांतिपूर्ण समाज की आकांक्षा रखती है, जहाँ विविधता के बीच एकता और प्रेम का वास हो।

इस प्रकार, नासिरा शर्मा के उपन्यास 'पारिजात' का मूल उद्देश्य भारतीय समाज में हिंदू-मुस्लिम एकता की उस गहरी जड़ को पुनः रेखांकित करना है, जो सदियों से हमारी सांस्कृतिक संरचना का आधार रही है। यह उपन्यास स्पष्ट करता है कि ये दोनों समुदाय केवल साथ रहने वाले समूह नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं, जिनकी पारस्परिकता से ही इस देश की वास्तविक पहचान निर्मित होती है। यद्यपि समय-समय पर अनेक विघटनकारी और अराजकतावादी शक्तियाँ इन्हें अलग करने का प्रयास करती रही हैं, फिर भी इनकी साझा परंपराएँ, जीवन-शैली और सांस्कृतिक व्यवहार उन्हें पुनः एक सूत्र में बाँध देते हैं। लेखिका यह प्रतिपादित करती हैं कि भारतीय संस्कृति का वास्तविक स्वरूप किसी एक धर्म, भाषा या परंपरा का प्रतिनिधि नहीं है, बल्कि यह विविध सांस्कृतिक धाराओं के संगम से निर्मित एक समन्वित संरचना है। इसी संदर्भ में महात्मा गांधी के विचार अत्यंत सार्थक प्रतीत होते हैं, जब वे कहते हैं कि यदि हमारा उद्देश्य, हमारा ध्येय और हमारे सुख-दुःख साझा हों, तो परस्पर सहिष्णुता और सहयोग के माध्यम से हम एक ऐसे समाज का निर्माण कर सकते हैं, जो सुदृढ़ और समरस हो। यह दृष्टिकोण उपन्यास के मूल भाव को पुष्ट करता है कि एकता केवल विचारों में नहीं, बल्कि साझा अनुभवों और संवेदनाओं में निहित होती है। गंगा-जमुनी तहज़ीब को उपन्यास में भारतीय संस्कृति की आत्मा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह केवल एक सांस्कृतिक अवधारणा नहीं, बल्कि जीवन जीने की वह शैली है, जिसमें विभिन्न धर्मों, भाषाओं और परंपराओं का स्वाभाविक समावेश होता है। यदि यह तहज़ीब खंडित होती है, तो भारतीय संस्कृति का संतुलन भी डगमगा जाता है। यही कारण है कि लेखिका इस सांस्कृतिक एकता की रक्षा को अत्यंत आवश्यक मानती हैं।

भक्तिकाल का उदाहरण इस संदर्भ में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, जिसे भारतीय सांस्कृतिक समन्वय का स्वर्णकाल माना जाता है। कबीर जैसे संतों ने अपने काव्य और विचारों के माध्यम से यह सिद्ध किया कि ईश्वर की अनुभूति किसी एक धर्म की सीमाओं में बंधी नहीं होती। हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा व्यक्त यह विचार, कि कबीर 'अल्लाह' और 'राम' दोनों को समान श्रद्धा से स्वीकार करते हैं, इस तथ्य को पुष्ट करता है कि भारतीय सांस्कृतिक चेतना का मूल स्वर समन्वय और समरसता है। 'पारिजात' का केन्द्रीय संदेश यह है कि समस्त मानवता एक ही मूल तत्व से निर्मित है। मनुष्य को धर्म, जाति या संप्रदाय के आधार पर



विभाजित करना उसकी मूल मानवीय पहचान के साथ अन्याय है। लेखिका यह स्पष्ट करती हैं कि विश्व का सबसे बड़ा धर्म 'मानवता' है, और यदि प्रत्येक व्यक्ति इस धर्म का पालन करे, तो समाज में शांति, सद्भाव और सहयोग का वातावरण स्वतः स्थापित हो सकता है। उपन्यास के अंत में कामिल खाँ का कथन - "लुगदी तो मियाँ वही है...", इस पूरे विमर्श का सार प्रस्तुत करता है। यह कथन प्रतीकात्मक रूप से यह दर्शाता है कि चाहे धार्मिक क्रियाएँ भिन्न हों, उनके मूल में निहित तत्व एक ही है। पतंग उड़ाने और ताजिया बनाने की क्रियाएँ भले ही अलग दिखाई दें, परंतु दोनों का आधार एक ही सांस्कृतिक संवेदना है।

इस प्रकार नासिरा शर्मा ने 'पारिजात' के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि भारतीय संस्कृति की वास्तविक शक्ति उसकी विविधता में निहित एकता है। उन्होंने अत्यंत संवेदनशीलता और गहराई के साथ यह दर्शाया है कि यदि समाज को सशक्त और संतुलित बनाए रखना है, तो हिंदू-मुस्लिम एकता और गंगा-जमुनी तहज़ीब को संरक्षित रखना अनिवार्य है। उनका यह उपन्यास केवल एक साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि सामाजिक समरसता और मानवीय सहअस्तित्व का एक सशक्त घोषणापत्र है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र के আলোক में यह स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि नासिरा शर्मा का साहित्य भारतीय समाज की उस गहरी सांस्कृतिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता है, जिसे सामान्यतः 'गंगा-जमुनी तहज़ीब' के नाम से जाना जाता है। यह तहज़ीब केवल सांस्कृतिक सह-अस्तित्व का प्रतीक नहीं, बल्कि एक जीवंत जीवन-दृष्टि है, जिसमें विविधता के भीतर एकता, भिन्नताओं के भीतर सामंजस्य और धार्मिक विविधताओं के भीतर मानवीय एकत्व की अनुभूति निहित है। नासिरा शर्मा ने अपने कथा-साहित्य, विशेषतः 'पारिजात' जैसे उपन्यासों के माध्यम से इस सांझा संस्कृति को न केवल अभिव्यक्त किया है, बल्कि उसे सामाजिक और नैतिक स्तर पर पुनर्स्थापित करने का सशक्त प्रयास भी किया है।

उनकी रचनाओं में यह तथ्य बार-बार उभरकर सामने आता है कि हिंदू और मुस्लिम समुदायों के बीच का संबंध केवल सह-अस्तित्व का नहीं, बल्कि सह-निर्माण का है। भारतीय संस्कृति की संरचना इन दोनों की संयुक्त सहभागिता से निर्मित हुई है, अतः किसी एक को अलग करके इस संस्कृति की संपूर्णता की कल्पना नहीं की जा सकती। नासिरा शर्मा ने यह दिखाया है कि चाहे त्योहारों का उत्सव हो, लोक-परंपराओं का निर्वाह हो, या जीवन के सुख-दुःख के क्षण, इन सबमें दोनों समुदायों की सहभागिता भारतीय समाज की मूल विशेषता रही है।

मोहर्रम, दशहरा, होली, ईद जैसे पर्वों के चित्रण के माध्यम से लेखिका यह सिद्ध करती हैं कि धार्मिक अनुष्ठान भी सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बन सकते हैं। ताजियों में हिंदुओं की सहभागिता, रामलीला में मुसलमानों की उपस्थिति, तथा मर्सियों और भजनों का पारस्परिक आदान-प्रदान इस तथ्य को पुष्ट करता है कि भारतीय संस्कृति में धार्मिक सीमाएँ कठोर नहीं, बल्कि लचीली और संवादपरक रही हैं। यही वह सांस्कृतिक लचीलापन है, जिसने इस देश को विविधताओं के बावजूद एकजुट बनाए रखा है। नासिरा शर्मा का साहित्य इस बात को भी रेखांकित करता है कि आस्था और श्रद्धा का संबंध धर्म से अधिक मानवीय संवेदनाओं से होता है। अजमेर शरीफ, इमामबाड़े, मंदिरों और तीर्थस्थलों पर विभिन्न धर्मों के लोगों की उपस्थिति यह सिद्ध करती है कि मनुष्य की आस्था किसी एक धार्मिक पहचान तक सीमित नहीं होती। इसी संदर्भ में उनका साहित्य यह संदेश देता है कि यदि मानवता को केंद्र में रखा जाए, तो धार्मिक भिन्नताएँ स्वतः गौण हो जाती हैं।



इसके अतिरिक्त, उनके कथा-साहित्य में ऐतिहासिक, पौराणिक और सांस्कृतिक प्रसंगों के माध्यम से यह भी दिखाया गया है कि भारतीय समाज में समन्वय की परंपरा प्राचीन काल से ही विद्यमान रही है। हुसैनी ब्राह्मणों की परंपरा, कबीर की समन्वयवादी दृष्टि, तथा विभिन्न ग्रंथों के अनुवाद और सांस्कृतिक आदान-प्रदान इस बात के प्रमाण हैं कि भारतीय संस्कृति ने सदैव संवाद और सहअस्तित्व को महत्व दिया है। हालाँकि, नासिरा शर्मा का साहित्य केवल अतीत की स्मृतियों का गुणगान नहीं करता, बल्कि वर्तमान की चुनौतियों की ओर भी संकेत करता है। वे इस तथ्य को स्वीकार करती हैं कि आधुनिक समय में संकीर्णता, कट्टरता और राजनीतिक हस्तक्षेप ने इस सांझा संस्कृति को चुनौती दी है। किन्तु उनके पात्रों और कथानकों के माध्यम से यह आशा भी व्यक्त की जाती है कि यदि समाज पुनः अपनी मूल मानवीय संवेदनाओं और सहिष्णुता की ओर लौटे, तो यह एकता पुनर्स्थापित हो सकती है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि नासिरा शर्मा का साहित्य गंगा-जमुनी तहज़ीब का केवल प्रतिबिंब नहीं, बल्कि उसका संवाहक और संरक्षक भी है। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि भारतीय समाज की वास्तविक शक्ति उसकी सांस्कृतिक विविधता में निहित एकता है, और इस एकता की रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का नैतिक दायित्व है। उनका साहित्य हमें यह प्रेरणा देता है कि हम धर्म, भाषा और संस्कृति की सीमाओं से ऊपर उठकर मानवता को सर्वोपरि मानें और एक ऐसे समाज का निर्माण करें, जहाँ सहअस्तित्व, सहयोग और सद्भाव ही जीवन के मूल मूल्य बनें।

संदर्भ ग्रंथ

1. धीरेन्द्र वर्मा : हिंदी साहित्य कोश (भाग 1) ज्ञानमंडल लिमिटेड वाराणसी, पुनमुद्रित जनवरी, 2015, पृ.712
2. आर.के. प्रभू तथा यू आर राव महात्मा गांधी के विचार, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली, नौवीं आवृत्ति 2012, पृ.415
3. वही पृ. 416
4. रामधारी सिंह दिनकर: संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, दूसरा पेपर बैक संस्करण, 2017, पृ. 255
5. नासिरा शर्मा: पारिजात, किताबघर प्रकाशन, तृतीय पेपरबैक संस्करण, 2017, पृ. 103
6. वही पृ. 264
7. वही पृ. 443
8. वही पृ. 443
9. वही पृ.414
10. वही पृ. 422
11. वही पृ.226
12. वही पृ. 446
13. वही पृ. 236
14. वही पृ. 163
15. आर.के. प्रभू तथा यू आर राव महात्मा गांधी के विचार, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली, नौवीं आवृत्ति 2012, पृ.382
16. हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, उन्नीसवीं आवृत्ति, 2014, पृ. 146
17. नासिरा शर्मा : पारिजात, किताबघर प्रकाशन, तृतीय पेपरबैक संस्करण, 2017, पृ.267

